भारत में स्थानीय स्वशासन तथा पंचायतीराज व्यवस्था : एक ऐतिहासिक विवेचन

डॉ0 दर्शी चतुर्वेदी

व्याख्याता, अग्रवाल कन्या महाविद्यालय, गंगापुरसिटी, राजस्थान

सारांश

भारतवर्ष में प्राचीनकाल से ही स्थानीय संस्थाऐं चली आ रही हैं। प्राचीनकाल में पंचायतें स्थानीय स्वशासन के रूप में कार्यरत थी। वर्तमान समय में पंचायतीराज व्यवस्था ग्रामीण स्थानीय स्वशासन का अभिन्न अंग बन चुकी हैं। शाब्दिक दृष्टि से पंचायतीराज शब्द हिन्दी भाषा के दो शब्दों पंचायत और राज से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है पांच जनप्रतिनिधियों के समूह का शासन जिसका तात्पर्य पंच से होता है जबकि आयत का अर्थ है विस्तार, राज से अभिप्राय है शासन का व्यवस्थित रूप से संचालन। इस प्रकार यह प्राचीनतन्त्र व्यापक रूप से गांवों की स्थानीय व्यवस्था तथा विकास के लिये अस्तित्व में आया। पंचायत व्यवस्था का उद्‌भव कब हुआ यह कहना काफी कठिन है। यह अनुमान अवश्य किया जा सकता है कि जब मानव समाज का उदय हुआ लगभग उसी समय से पंचायतीराज व्यवस्था का भी उद्‌भव हुआ होगा। भारत की पौराणिक कथाऐं पंचायतों से सम्बन्धित कहानियों से जुड़ी हैं। कालान्तर में पंचायत की इस अवधारणा में परिवर्तन होता गया और वर्तमान में पंचायत की अवधारणा का अभिप्राय निर्वाचित सभा से है।

मूल शब्द

पंचायतीराज, संवैधानिक संशोधन, महिलायें, संविधान, स्थानीय स्वशासन।

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ0 दर्शी चतुर्वेदी

भारत में स्थानीय स्वशासन तथा पंचायतीराज व्यवस्थाः एक ऐतिहासिक विवेचन

RJPP 2018, Vol. 16, No. 1, pp. 1-10, Article No. 14
Received on 30/11/2017
Approved on 31/01/2018

***Online available at** : http://anubooks.com/?page_id=2004*

भारतवर्ष में प्राचीनकाल से ही स्थानीय संस्थाऐं चली आ रही हैं। प्राचीनकाल में पंचायतें स्थानीय स्वशासन के रूप में कार्यरत थीं।[1] शाब्दिक दृष्टि से **पंचायतीराज शब्द हिन्दी भाषा के दो शब्दों पंचायत और राज** से मिलकर बना है, जिसका **अर्थ है पाँच जनप्रतिनिधियों के समूह का शासन।**[2] यह अनुमान किया जा सकता है कि जब मानव समाज का उदय हुआ लगभग उसी समय से पंचायतीराज व्यवस्था का भी उद्‌भव हुआ होगा।[3] भारत में पंचायतों की प्राचीनता के प्रमाण ऋग्वेद और अथर्ववेद में मिलते हैं।[4] भारत की पौराणिक कथाऐं पंचायतों से सम्बन्धित कहानियों से जुड़ी हैं। कालान्तर में पंचायत की इस अवधारणा में परिवर्तन होता गया और वर्तमान में पंचायत की अवधारणा का अभिप्राय निर्वाचित सभा से है।[5]

वैदिक काल से ही ग्राम को प्रशासन की मौलिक इकाई माना जाता रहा है। गाँव की पंचायतें गाँव के लोगों के द्वारा संगठित होती थीं। प्रशासकीय और न्यायिक कार्यों का सम्पादन करती थी। उत्तर वैदिक काल में रामायण और महाभारत में भी पंचायतों की महत्वपूर्ण स्थिति देखने को मिलती है।[6] **'मनुस्मृति' में मनु ने भी स्थानीय स्वशासन** के व्यवस्थित स्वरूप पर बल दिया तथा शासन की शक्तियों एवं कार्यों के विकेन्द्रीकरण के महत्व को स्पष्ट करते हुये लिखा है कि राज्य में शक्ति का विकेन्द्रीकरण होना चाहिये तथा प्रजा में स्वशासन की प्रवृत्ति होनी चाहिये।[7] **कौटिल्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र' में ग्राम पंचायतों की स्थानीय शासन एवं न्याय व्यवस्था** में भूमिका का उल्लेख करते हुये लिखा है कि स्थानीय विवादों का निर्णय ग्राम वृद्धों एवं सामन्तों द्वारा किया जाता है।[8] **'शुक्रनीति' में भी ग्राम पंचायत** का वर्णन किया गया है। **मौर्यकाल (324 ई0पू0 236 ई0पू0) में पंचायतीराज** को विकसित करके इसके माध्यम से शासन में विकेन्द्रीकरण की नीति ही अपनायी गयी। गुप्तकालीन व्यवस्था में यद्यपि राजवंशी प्रणाली भी थी लेकिन शासन का विकेन्द्रीकरण विभिन्न स्तरों पर किया गया था। पंचायतीराज व्यवस्था का सर्वथा परिष्कृत व स्वर्णिक स्वरूप दक्षिण भारत के विशेषतया चोल शासन में दिखाई देता है।[9]

मध्य काल में (सन् 1556–1749) मुस्लिम राजाओं ने पंचायत व्यवस्था में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया। मुगलकालीन शासन व्यवस्था में मौर्यकाल और गुप्तकाल की स्वशासी निकायें स्वस्थ्य और क्रियाशील थीं।[10] स्थानीय विवादों को निपटाने का कार्य ग्राम पंचायतें ही करती थीं। अकबर के समय ग्राम पंचायतों को वैधानिक रूप से न्याय करने वाली संस्थाऐं स्वीकार कर लिया गया। पंचायतों के निर्णयों को मान्यता प्रदान की गई।[11] **अबुल फजल** के अनुसार प्रत्येक ग्राम प्रशासन के लिये ग्राम पंचायतें होती थीं, जिनमें गाँव में रहने वाले प्रमुख सदस्य सम्मिलित होते थे। **ह्यू टिंकर** के मतानुसार ग्रामीण प्रशासन के लोकतान्त्रिक स्वरूप के बावजूद मुगलकाल में गाँव शक्तिशाली मुखिया के द्वारा नियन्त्रित किया जाता था, यह एक आदमी का शासन था। पंचायतों का स्वरूप पूर्णतः प्रतिनिध्यिात्मक नहीं था। इसके अधिकांश सदस्य समृद्ध परिवारों या ब्राह्मणों और श्रेष्ठ कृषकों में से होते थे।[12]

ब्रिटिशकाल में पंचायतों ने अपनी सत्ता गंवा दी क्योंकि केन्द्रीय ब्रिटिश सरकार ने सारी सत्ता की बागडोर अपने हाथ में ले ली। इस काल में ये सरकार का हिस्सा नहीं रहीं यद्यपि

सामाजिक परिप्रेक्ष्य में गाँव में इसका महत्व कायम था।[13] **1870 की मेयों की घोषणा[14] तथा लार्ड रिपन का वर्ष 1882 का स्थानीय स्वशासन** का **'मैग्नाकार्टा'** इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण हैं।[15] **भारत शासन अधिनियम 1919 एवं 1935 को भी स्थानीय स्वशासन** का वैचारिक दस्तावेज माना जाता है। जिसने स्थानीय स्वशासन को प्रान्तों के लिये हस्तान्तरण विषय बना दिया था।[16]

सन् 1942 में गाँधीजी ने गोलमेज सम्मेलन में ग्राम पंचायतों द्वारा अप्रत्यक्ष निर्वाचन का सुझाव दिया। ग्राम स्वराज्य का समर्थन करते हुये गाँधीजी ने लोकशक्ति व लोक प्रतिनिधियों पर आधारित सत्ता के विकेन्द्रीकरण पर जोर दिया था। गाँधीजी के अनुसार पंचायतीराज में 'पंचायत' के कानून ही माने जायेंगे जो उन्हीं के द्वारा बनाये गये होंगे। उन्होने कहा कि देश की आजादी का अर्थ मात्र राजनीतिक आजादी नहीं इसका अर्थ मात्र शहरी लोगों की आजादी भी नहीं है। वास्तविक आजादी वह होगी जिसमें ग्रामवासियों को अपने भाग्य का अपने भविष्य के निर्माण का स्वामित्व प्राप्त होगा। यह उनके स्वशासन के द्वारा ही हो सकता है और इसी का नाम पंचायतीराज है। वस्तुतः गाँधीजी के द्वारा सर्वाधिक महत्वपूर्ण सुझाव राजनीतिक क्षेत्र में सत्ता के विकेन्द्रीकरण का दिया गया। गाँधीजी की धारणा थी कि देश के 80 प्रतिशत ग्रामवासियों को सुखी सम्पन्न और आत्मनिर्भर कराये बिना स्वतन्त्र भारत की कल्पना नहीं की जा सकती है। उनका कहना था कि भारत की आत्मा गाँवों में बसती है जब तक गाँव स्वतन्त्र नहीं हो जाते, देश पूर्ण रूप से स्वतन्त्र नहीं होगा।[17]

संविधान सभा के वाद – विवाद में संविधान में पंचायत के महत्व का दोहरा चित्र उभरा। एक तरफ वे सदस्य थे जिन्होंने पंचायतों को लोकतन्त्र के विद्यालय तथा ग्रामीण उत्थान के अभिकरण के रूप में माना। दूसरी तरफ डॉ. अम्बेडकर ने इसका विरोध किया जो ग्रामीण समुदायों के बारे में ऊँचे विचार नहीं रखते थे। वास्तव में निजी अनुभवों ने उनके मन पर इन जातिग्रस्त गाँवों एवं पंचायतों की नकारात्मक छाप छोड़ी थी।[18]

26 जनवरी 1950 को भारत का नवनिर्मित संविधान प्रवर्तित हुआ। संविधान ने स्थानीय स्वशासन को राज्यों की कार्यसूची के अन्तर्गत रखा है। **संविधान के अनुच्छेद 40 में वर्णित राज्य के नीति – निर्देशक तत्वों** में सरकार से अपेक्षा है कि स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में कार्य करने के लिये व अपने को समर्थ बनाने के लिये राज्य ग्राम पंचायतों की स्थापना करने और उन्हें आवश्यक शक्तियां और अधिकार प्रदान करने के लिये कदम उठाये[19] परन्तु भारत में लम्बे समय तक स्थानीय स्वशासन ठीक प्रकार से कार्य न कर सका व कई कमियों का शिकार रहा। स्थानीय स्वशासन की उपयोगिता में वृद्धि व कमियों को दूर करने हेतु सरकारों द्वारा समय – समय पर कई समितियों का गठन किया गया। **बलवंत राय मेहता समिति (1957)** जिसने जिला स्तर पर **जिला परिषद, खण्ड स्तर पर पंचायत समिति, ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत** बनाने का सुझाव दिया।[20] **सर्वप्रथम राजस्थान के नागौर नगर में 2 अक्टूबर 1959 को नेहरू जी ने इसका उद्घाटन** किया। इसके बाद अगले 3–4 वर्षों में देश के अधिकांश राज्यों में पंचायतीराज व्यवस्था लागू कर दी गई।[21] **के. संथानम् समिति (1963)[22]**

अशोक मेहता समिति (1977) में द्विस्तरीय व्यवस्था का सुझाव दिया।[23] जी. वी. के. राव समिति (1985)[24] एल. एम. सिंघवी समिति (1986)[25] पी. के. थुंगन कमेटी (1988)[26] सरकारिया आयोग जून 1988।

1989 में प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी के प्रयासों **से 64 वां संशोधन विधेयक** लाया x;krkfd iapk;rhjkt laLFkkvksa dks izHkkohcuk;k tk ldsA[27] इस संविधान संशोधन के निम्न प्रावधान थे – त्रिस्तरीय पंचायतीराज का गठन; **तीस प्रतिशत आरक्षण महिलाओं के लिये** सुरक्षित रखने का प्रावधान; **वित्त आयोग का गठन;** पंचायतों के चुनाव निर्वाचन आयोग के माध्यम से कराने की व्यवस्था; नियन्त्रण एवं महालेखा परीक्षक द्वारा पंचायत के लेखों की जांच आदि।[28] परन्तु यह विधेयक पारित न हो सका। **16 दिसम्बर 1991 को पी. वी. नरसिम्हाराव सरकार के द्वारा 72 वां संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा** में प्रस्तुत किया गया। विधेयक को संयुक्त संसदीय समिति (प्रवर समिति) को सौंपा गया। उक्त समिति ने अपनी सम्मति **जुलाई 1992 में दी और विधेयक के क्रमांक को परिवर्तित कर 73 वां संविधान संशोधन कर दिया जिसे 22 दिसम्बर 1992 को लोकसभा ने तथा 23 दिसम्बर 1992 को राज्य सभा ने पारित किया। 17 राज्यों के अनुमोदन के बाद राष्ट्रपति द्वारा 20 अप्रैल 1993 को इस पर अपनी सम्मति प्रदान की और इसे 25 अप्रैल 1993 को 73 वें संविधान संशोधन के रूप में सम्पूर्ण देश** में लागू कर दिया गया।[29]

❖ 73 वें संवैधानिक संशोधन के प्रमुख प्रावधान

पी. वी. नरसिंहराव सरकार ने राजीव गाँधी सरकार द्वारा तैयार पंचायतीराज संस्थाओं से सम्बन्धित **(64 वें) विधेयक को 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम के रूप में दिसम्बर 1992 में संसद से पारित करवा लिया। 73 वें संविधानिक संशोधन अधिनियम ने संविधान में एक नया भाग भाग 9 जोड़ा जिसका शीर्शक है 'पंचायतें'। इसके द्वारा अनुच्छेद 243 में पंचायतों से सम्बन्धित प्रावधान किये गये हैं जिसमें 15 उप – अनुच्छेद हैं। यह अधिनियम 25 अप्रैल 1993 से प्रवृत्त हुआ है।** इस अधिनियम के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैं – ग्राम सभा, त्रिस्तरीय पंचायतीराज, पंचायतों के सदस्यों एवं अध्यक्षों का चुनाव, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिये आरक्षण की व्यवस्था,[30] पंचायत की अवधि एवं निर्वाचन, पंचायतों की शक्तियां, प्राधिकार और उत्तरदायित्व, वित्तीय अधिकार, वित्तीय आयोग, लेखा व अंकेक्षण सम्बन्धी नियम राज्य विधान मण्डल द्वारा के समान, पंचायत सदस्यों योग्यता राज्य विधान मण्डल के सदस्यों की योग्यता के समान, निर्वाचन आयोग की व्यवस्था।[31]

❖ 73 वें संशोधन अधिनियम की विशेषताऐं

73 वें संविधान संशोधन अधिनियम की निम्नलिखित विशेशताऐं हैं –

पंचायतीराज संस्थाओं को एक संवैधानिक अनिवार्यता, ग्राम सभा को संवैधानिक, महिलाओं और पिछड़े वर्गों को आरक्षण, राज्य स्तरीय निर्वाचन आयोग।

उपरोक्त विशेषताओं से स्पष्ट है कि **73 वें संविधान संशोधन** से बड़े पैमाने पर राज्यों

में चुनाव हुये। महिला जगत को पंच, सरपंच, प्रधान, जिला प्रमुख तथा अध्यक्ष पद पर आसीन होने का अवसर मिला। बडी संख्या में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछडे वर्गों ने भी पंचायतीराज व्यवस्था में अपना स्थान बना लिया। सही अर्थों में **संविधान के 73 वें संशोधान के 24 अप्रैल 1993 को** कानून बन जाने पर मौजूदा चुनाव प्रणाली की शुरूआत हुई। 73 वें संविधान संशोधन ने मृतप्राय पंचायतों को जीवन प्रदान किया। संवैधानिक दर्जा दिये जाने से उनका अस्तित्व सुरक्षित हो गया। इससे पंचायतों को न केवल प्रशासनिक अधिकार प्राप्त हुये बल्कि वित्तीय संशोधन की गारंटी भी प्राप्त हुयी जिससे ग्रामीण विकास में सहायता प्राप्त हो सकेगी।[32]

❖ पंचायती राज व्यवस्था के कार्य

संवैधानिक संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान की 10 वीं अनुसूची के पश्चात् 11 वीं अनुसूची जोड़ी गयी है। जिसमें पंचायतीराज व्यवस्था के कार्यों को निम्न रूप में देख सकते हैं जो परिवर्तन की यथास्थिति को स्पष्ट करती है। कृषि, जिसमें कृषि प्रसार भी सम्मिलित है, भूमि सुधार, भूमि सुधारों का क्रियान्वयन, भूमि की चकबन्दी तथा भूमि संरक्षण, लघु सिंचाई, जल प्रबंध तथा जल आच्छादन विकास, पशुपालन दुग्ध उद्योग तथा कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन, सामाजिक वानिकी तथा कृषि वानिकी, लघु वन उत्पाद, लघु उद्योग जिसके अर्न्तगत खाद्य अनुरक्षण उद्योग सम्मिलित है, खादी ग्रामीण तथा कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास, पेयजल, ईंधन और चारा सड़कों पुलियों, पुलों, घाटों, तथा संचार के साधनों की व्यवस्था, ग्रामीण विद्युतीकरण जिसके अर्न्तगत विद्युत का वितरण भी है, गैर पारम्परिक ऊर्जा के स्रोत, गरीबी निराकरण कार्यक्रम, शिक्षा, जिसमे प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय सम्मिलित हैं, तकनीकि प्रशिक्षण तथा व्यवसायिक शिक्षा, प्रौढ़ तथा अनौपचारिक शिक्षा, पुस्तकालय, साँस्कृतिक क्रियाकलाप, बाजार और मेले, स्वास्थ्य तथा स्वच्छता, जिसमें अस्तपाल प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा औषधालय सम्मिलित हैं, परिवार कल्याण कार्यक्रम, महिला एवं बाल विकास, समाज कल्याण जिसके अर्न्तगत विकलांगों और मानसिक रूप से अविकसित व्यक्तियों का कल्याण भी सम्मिलित है, जनता के कमजोर वर्गों का कल्याण तथा मुख्य रूप से अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का कल्याण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, सामुदायिक सम्पत्तियों का रखरखाव।[33]

❖ भारत में ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की संगठनात्मक व्यवस्था

भारत में स्थानीय प्रशासन को दो भागों मे बाँटा गया है ग्रामीण स्वशासन संस्थाऐं तथा शहरी स्वशासन संस्थाऐं।

ग्रामीण स्वशासन संस्थाऐं – पंचायतीराज व्यवस्था का इतिहास परम्परागत मूल्यों और प्राचीनता में बंधा हुआ दिखलाई देता है। लेकिन समय और समाज की गति में जैसे – जैसे परिवर्तन आता गया पंचायतों के अस्तित्व भी परिर्वतनवादी होते गये। भारत के समग्र विकास की दिशा में पंचायतीराज व्यवस्था एक आन्दोलन के साथ ही साथ विकास का श्रेष्ठतम प्रयास है। स्वतंत्रता से पूर्व इस श्रेणी में ग्राम पंचायत, यूनियन बोर्ड तथा जिला बोर्ड आते थे।[34] **पंचायतीराज व्यवस्था का वर्तमान स्वरूप संविधान के 73 वें संशोधन 1993 पर** आधारित है। इस

अधिनियम का उद्देश्य सम्पूर्ण देश में एक समान पंचायतीराज व्यवस्था लागू करना तथा पंचायतीराज संस्थाओं को ग्रामीण विकास में सक्रिय भूमिका निभाने के योग्य बनाना है, लेकिन देश के विभिन्न राज्यों में पंचायतों के ढाँचे में एकरूपता नही थी। इस दृष्टि से सभी राज्यों में त्रिस्तरीय व्यवस्था लागू की जानी थी। जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से कम है उनके लिये यह विकल्प रहेगा कि वे मध्यवर्ती स्तर न रखें। **73 वें संशोधन अधिनियम लागू होने के समय विभिन्न राज्यों में पंचायतीराज व्यवस्था की संगठनात्मक** स्थिति इस प्रकार है।

एक स्तरीय व्यवस्था – जम्मू कश्मीर, केरल, त्रिपुरा, अण्डमान निकोबार द्वीप समूह, चंड़ीगढ़, दादर तथा नागर हवेली, दमनद्वीव तथा गोवा इत्यादि।

द्विस्तरीय व्यवस्था – असम, हरियाणा, पंजाब, उड़ीसा, तमिलनाडु, मणिपुर, दिल्ली, पाण्डिचेरी राज्यों मे द्विस्तरीय व्यवस्था है।

त्रिस्तरीय व्यवस्था – बिहार, गुजरात, पश्चिमी बंगाल, अरूणाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान तथा उत्तरप्रदेश आदि राज्यों में त्रिस्तरीय व्यवस्था है।

जहाँ कोई व्यवस्था नही – मेघालय, नागालैण्ड, लक्ष्यद्वीप, मिजोरम आदि राज्यों में पंचायती राज्य व्यवस्था नही है। पंचायतीराज के माध्यम से सरकारी तन्त्र को विभाजित करके और सत्ता को बाँट करके ग्रामीण भारत का पुर्ननिर्माण करने का प्रयत्न किया गया है। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों के लिये पंचायतीराज व्यवस्था लागू की गई जिनकी तीन मुख्य इकाइयाँ हैं। **ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, खण्ड स्तर पर क्षेत्रीय समितियाँ एवं जिला स्तर पर जिला परिषद** है। ग्रामीण क्षेत्रों में इन स्थानीय स्वशासन संस्थाओं का ढ़ाँचा सीढ़ीनुमा है। विश्व के सबसे बड़े **लोकतन्त्र भारत में 537 जिला पंचायतों में 11825 निर्वाचित प्रतिनिधि हैं जिसमें 41 प्रतिशत महिलाऐं, 18 प्रतिशत अनुसूचित जाति तथा 11 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियाँ हैं। 6067 पंचायत समितियों में 110070 निर्वाचित प्रतिनिधियों में 43 प्रतिशत महिलाऐं, 22 प्रतिशत अनुसूचित जाति व 13 प्रतिशत जनजातियाँ हैं। इसी प्रकार 234676 ग्राम पंचायतों में 2073715 निर्वाचित प्रतिनिधियों में 40 प्रतिशत महिलायें, 16 प्रतिशत अनुसूचित जाति तथा 11 प्रतिशत जनजातियाँ** हैं।[35]

ग्राम पंचायत पंचायतीराज की पहली संस्था है। ग्राम पंचायत ग्राम सभा की कार्यकारिणी समिति है जो प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित इकाई है। ग्राम पंचायत के सदस्यों की संख्या पृथक – पृथक ग्राम पंचायतों में पृथक – पृथक होती है। प्रत्येक पंचायती राज व्यवस्था में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के एक तिहाई स्थान (जिनमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और पिछड़े वर्गों की महिलाओं के लिये आरक्षित स्थानों की संख्या सम्मिलित है।) महिलाओं के लिये आरक्षित किये गये हैं। **ग्राम पंचायत के अध्यक्ष को सरपंच या प्रधान** कहा जाता है। असम, बिहार, हरियाणा, उड़ीसा, राजस्थान, पंजाब, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में अध्यक्ष को ग्राम सभा द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुना जाता है। बाकी राज्यों में ग्राम पंचायत के सदस्य अपने सदस्यों में से सरपंच का चुनाव करते हैं। ग्राम पंचायत अपना एक

उपाध्यक्ष भी चुनती है। जो ग्राम सभा का भी उपाध्यक्ष होता है। ग्राम पंचायत का कार्यकाल भी सभी राज्यों में समान नही है। ग्राम पंचायत का प्रमुख उद्देश्य ग्रामों का विकास करना है। इसलिये वह विकास सम्बन्धी अनेक योजनाऐं बनाती हैं और उन्हे कार्यरूप देती हैं।[36]

पंचायत समिति भारत की ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की पंचायतीराज व्यवस्था का मध्यवर्ती स्तर **है। आन्ध्रप्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, उड़ीसा और राजस्थान में इसे पंचायत समिति, उत्तर प्रदेश में क्षेत्र समिति, असम में आँचलिक पंचायत, पश्चिम बंगाल में आँचलिक परिषद्, गुजरात मे तालुका परिषद्, मध्यप्रदेश में जनपद पंचायत, कर्नाटक में तालुका विकास परिषद् और तमिलनाडु में पंचायत संघ परिषद्** कहते हैं। प्रत्येक विकास खण्ड में जितनी पंचायतें होती हैं, उनके ऊपर एक पंचायत समिति होती है। ग्राम पंचायत के समान पंचायत समिति में भी स्थान आरक्षित किये गये हैं। इसका कार्यकाल पाँच वर्ष निर्धारित किया गया है। यह क्षेत्र के सभी विकास कार्यों के प्रति उत्तरदायी है। पंचायत समिति ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य करने वाली एक मात्र सत्ताधारी संस्था होगी जिनका सम्बन्ध उसके क्षेत्र से होगा।[37] जिला पंचायत भारत के ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की पंचायतीराज व्यवस्था का शिखर है। आन्ध्रप्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल में इसे जिला परिषद तथा असम में महकमा परिषद, तमिलनाडु, कर्नाटक में जिला विकास परिषद कहते हैं। प्रत्येक जिला परिषद उस जिले के नाम से होगी जिसके लिये वह गठित की गयी है। जिला परिषद जिला स्तर पर गठित ऐसा स्थानीय निकाय है जिसे जिलों में विकास योजनाओं व कार्यक्रमों के सफल निष्पादन हेतु पर्यवेक्षकीय भूमिका का दायित्व सौंपा गया है। 73 वें संविधान संशोधन के पश्चात् जिला परिषद की संरचना को पूरे देश में एकरुपता देने का प्रयास किया गया है। ग्राम पंचायत, पंचायत के समान ही जिला परिषद में भी अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातिओं एवं पिछड़े वर्गों को एक तिहाई आरक्षण दिया गया है। सामान्य वर्ग तथा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातिओं की महिलाओं के लिये एक तिहाई आरक्षण ग्राम पंचायत तथा पंचायत समिति के समान रखा गया है। जिला परिषद का कार्यकाल पाँच वर्ष है। जिला परिषद का विशेष कार्य ग्राम पंचायत तथा पंचायत समिति के काम की देखभाल करना तथा इनके और सरकार के मध्य समन्वय स्थापित करना है। अतः नवीन अधिनियम में उसे व्यापक शक्तियाँ, कार्य एवं कर्तव्य प्रदान किये गये हैं।[38]

❖ पंचायती राज प्रणाली की कमियाँ

भारतीय लोकतन्त्र पद्धति का मूल आधार पंचायती राज व्यवस्था रही है। पंचायतें हमारे लोकतान्त्रिक संस्थाओं की रीढ़ हैं। जिसके चारों ओर गाँवों की समूची सामाजिक, आर्थिक गतिविधियाँ चलती हैं। भारत का परिवेश सदैव से ही ग्रामीण रहा है। परन्तु पंचायती राज प्रणाली अनेक कमियों का शिकार रही हैं। ये समस्याऐं अथवा कमियाँ निम्नलिखित हैं।

अशिक्षा, जातिवाद एवं साम्प्रदायिकतावाद, गुटबन्दी, वित्त का अभाव, सत्ता के विकेन्द्रीकरण का अभाव, अधिकारियों एवं चुने हुये पदाधिकारियों के मध्य सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों की कमी, अधिकारों की कमी, सामंजस्य का अभाव, योग्य नेतृत्व का अभाव, प्रशिक्षण व्यवस्था का अभाव,

भ्रष्टाचार, सरपंच पति, सूचना का अभाव। उपर्युक्त कमियों के निष्कर्ष स्वरूप यह स्पष्ट है कि अधिकांश कमियाँ प्रशासनिक तन्त्र की कुशलता एवं सक्रियता की कमी के कारण उत्पन्न हुयी हैं व इन्हें दूर किया जा सकता है।

References

. M. Elphinstone, *The History of India,* John Murray, London, **1905, p. 68**
. Iltija Khan, *Government of Rural India,* Asia Publication House, Bombay, **1969, p. 31**
. B. B. Majumdar, *Problems of Public Adminsrtation*, Pustak Mahal, Patna, **1951, p. 205**
. K. P. Jayaswal, *Hindu Polity,* Priting and Publishing Co., Bangalor, **1995, p.12**
. शकुन्तला माथुर, *प्राचीन भारत में पंचायती राज की परम्परा,* विधि भारती, नई दिल्ली, **(1995),पृ. 8**
. Radhamukund Mookerji, *Local Government in Ancient India*, Motilal Banarsidas, New Delhi, **1958, p. 29**
. पं. श्री हरगोबिन्द शास्त्री, *मनुस्मृति, द्वितीय संस्करण, चौखम्बा संस्कृत सीरीज,* वाराणसी, **1970,पृ. 332**
. विधा भास्कर, वेदरत्न, उदयवीर शास्त्री, कौटलीय अर्थशास्त्र, मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास, दिल्ली, **पृ. 91–92**
. घनश्याम दत्त शर्मा, *मध्यकालीन भारतीय सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थायें,* राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, **1992, पृ. 21–24**
. Cross Selil, *The Development of Self Government in India 1858-1914,* University of Cicago Press, Cicago, **1922, p. 27**
. Dr. S. Bhatnagar, *Rural Local Government in India,* Light and Life Publishers, New Delhi, **1978, p. 21**
. Heu Tinker, *Foundation of Local Self Government in India-Pakistan and Berma*, Lalbani Publishing House, New Delhi, **1967, p. 19-20**
. Ravindra Sharma, *Villiage Panchayats in Rajasthan,* Alkesh Publishers, Jaipur, **1974, p. 3**
. Vasant Desai, *Panchayati Raj-Power to the People*, Himalaya Publishing House, Bombay, **1990, p.66**
. Heney Haddick, *Panchayati Raj, A Study of Rural Local Government in India*, Logman Group Ltd, London, **1970, p. 14**
. Shakuntala Sharma, *Grassroots Politics and Panchayati Raj,* Deep and Deep Publication, New Delhi, **1994, p.108**
. Surat Singh, *Decentralized Governence in India-Myth and Reality*, Deep and Deep

Publication, New Delhi, **(2004), p. 16-19**

. Dr. R. S. Rajput and Prof. D. R. Meghe, *Panchayati Raj in India,Democracy at Grassroots*, Deep and Deep Publication, New Delhi, **1984, p. 149**

. D. D. Basu, *Introduction to the Constitution of India*, *Prentice-Hall of India Pvt.Ltd, New Delhi, **(1976), p. 120***

. Dr. Hoshiar Singh, *"Decentralisation Models and Responsive Administration: Need of 21st Century Administration"*, Kurukshetra Research Journal, Kuruksetra University**, Vol. XXX-XXXI, (1996-97), p. 2-3**

. S. L. Goel and Shalini Rajneesh, *Panchayati Raj in India-Theory and Practice,* Deep and Deep Publication pvt Ltd, New Delhi, **(2003), p.15-18**

. Manoj Rai and Malini Nambiar and Sohini Pavl and Sangeeta U. Singh and Satinder S. Sahini, *The State of Panchayats-A Participatory Perspective,* Samskriti, New Delhi, **(2001), p. 7-8**

. B. S. Bhargava, *Panchayati Raj Institution An Analysis of Issue Problems and Recommendations of Ashok Mehta Committee*, Ashish Publishing House, New Delhi, **(1979), p.16-17**

. Sushila Kaushik, *Women and Panchayati Raj*, Har-Anand Publication, New Delhi, (**1993), p. 66-67**

. Sandeep Joshi, Panchayati Raj Institutions and Poverty Alleviation, Rawat Publications, Jaipur**, (2000), p.42**

. R. P. Joshi and G. S. Narvani, *Panchayti Raj in India, Emerging Trands Across the States,* Rawat Publication, Jaipur, **(2002), p.39-40**

. Ratna Ghosh and Alok Pramanik, *Panchayati System in India- Historical, Constitutional and Financial Analysis*, Kaniska Publishers Distributors, New Delhi, **(1999), p.216**

. Arun Ghosh, *64th Amendment A major Step towards Decentralization,* The Hindustan Times, Delhi, May **25th (1989)**

. M. P. Dubey and Munni Padalia, *Democratic Decentralazation and Panchayati Raj,* Anamika Publishers, New Delhi, **(2002), p.98-101**

. S. N. Mishra and S. S. Singh, Roads to Model Panchayati Raj, Mittal Publication, New Delhi, **(1993), p. 243-244**

. द्वारका प्रसाद सावले, लोक प्रशासन, अंटलाटिक पब्लिशर्स डिस्टीब्यूटस, नई दिल्ली, **(2006)**, **पृ. 693–694**

. जी. एल. कुलहरि एवं रेवन्तराम, पंचायतीराज व्यवस्था तथा महिला सशक्तिकरण, प्रशासनिक चिन्तन, वाल्यूम 1, जन–जून **(2003)**, लोकप्रशासन विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, **पृ. 122–123**

. आशुतोष श्रीवास्तव, विकेन्द्रीकरण एवं पंचायती राज व्यवस्था, सनराइज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, **(2004), पृ. 30–31**

. डॉ. बृजमोहन सिन्हा, भारत में नगरीय सरकारें, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर,

(1976), **पृ.3**

. http://www.eias.org/unheons/2006/indiachina100506/methew/00506.pdf,Accessed-on **05.02.07**

. S. L. Goel and Shalini Rajneesh, Panchayati Raj in India, Theory and Practice, **p.93-99**

. O. C. Sud, Administrative Problems of Rural Development in India, Kaniska Publishers House, Delhi, **(1992), p. 52-53**

. Surat Singh, Decentralized Governence in India-Myth and Reality, **p. 108**